पर्यावरण, परिस्थितिकीय एवं वर्तमान स्वरूप

–Dr. BHARTI DWIVEDI
POST – DOCTORAL, FELLOW, ICPR
UNIVERSITY OF LUCKNOW, U.P.

शोध–सार

युग परिवर्तन सत्त प्रक्रिया है। ''कलयुग'' भी अवश्यंभावी था, परन्तु ''कल'' की क्षुधाग्नि इतनी विनाशकारक होगी कि जो प्राकृतिक तादात्म्य एवं संतुलन के 5,000 वर्षों से सुव्यवस्थित, स्वनियमन को नष्ट कर मात्र एक शताब्दी से भी कम समय में छिन्न–विछिन्न कर देगी, सम्भवतः मानव जगत् ने भी यह आशा न की होगी। जब पक्षियों को चहचहाना बन्द हुआ तो पाश्चात्य चिंतन की निद्रा भंग हुयी तथा जिस तीव्रता से औद्योगिक विकास का चरम प्राप्त किया था वही गति ''पर्यावरणवादी आन्दोलनों'' में भी दृष्टिगत होने लगी। ''म्हूमन सेंटरड'' या ''एंथ्रोप्रोसेंट्रिक'' या उथला पारिस्थितिकी जैसे मनुष्य की प्रकृति के नियंत्रक और नियामक सम्प्रत्यय व विचारधारा, महासागरों की ऊँी लहरों और भयंकर झंझावातों में बह गई और ''ग्रीन इनवायरमेंटलिज्म'' और ''गहन पारिस्थितिकी'' की विचारधारा प्रसूत हुई जहां मनुष्य कसे प्रकृति से संयुक्त माना गया दोनों में अंतरसंबंधों व अंतरनिर्भरता का सिद्धांत प्रस्फुटित हुआ।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण सम्प्रत्यय की कल्पना सदैव प्रकृति से की गई है, जिसमें समस्त जीव एवं निर्जीव पदार्थ परस्पर निर्भर, समन्वयक व संतुलित अवस्था में रहते हुये सृष्टि तंत्र का निर्माण करते हैं। श्रीमद्भगवत्गीता में चर एवं अचर तत्वों को ही शक्ति से उत्पन्न मानते हुये व्यक्त किया गया है कि जीवन एवं पदार्थ दोनो पूज्य हैं। सम्पूर्ण धरती व प्रकृति हमस ब में से किसी की नहीं है अपितु हम सब धरती व प्रकृति के हैं।[1] पर्यावरण अर्थात् अपने चारों ओर का आवरण ; चहुँओर का प्रकृति परिवेश,, सभी का समावेश इसके अन्तर्गत होता है। पर्यावरण वह पक्ष है जिसने पृथ्वी को जीवित जगत् का गौरव प्रदान किया है। सौर परिवार में केवल पृथ्वी पर ही पौधों और प्राणियों के प्रति अनुकूल वातावरण उपलब्ध हैं, जिसके कारण हम इसे 'वसुन्धरा' कहते हैं। पृथ्वी पर व्याप्त पर्यावरण प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ वरदान है। मानव की समस्त अनुक्रियायें व आधारभूत आवश्यकताएँ, सामाजिक आवश्यकताएं, प्रगतिकारक व उच्च आवश्यकतायं एवं साक्र मण्डलीय व प्राकृतिक क्रिया–प्रतिक्रिया आदि का स्पष्ट सम्बन्ध, पर्यावरण से परिलक्षित होता है। प्रकृति में परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से जो भी है यथा–पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा, वायु, आकाश, जल, अग्नि, वनस्पति, मृदा, पक्षी, वृक्ष, मानव इत्यादि पर्यावरण से सम्बन्धित हैं। पर्यावरण से प्रत्येक जीव का जन्मतः सम्बन्ध है, अतः पर्यावरण भैतिक तत्वों, शक्तियों और प्रक्रमों का ऐसा समुच्चय है जो सृष्टि को जीवन्त बनाये हुये है।[1]

पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है वह आवरण जिसके द्वारा मनुष्य प्रत्येक ओर से आवृत व प्रभावित होता है। ''पर्यावरण एक अविभाज्य समष्टि है तथा भौतिक, जैविक एवं सांस्कृतिक तत्त्वों वाले पारस्परिक क्रियाशील तन्त्रों से इसकी रचना होती है। यह तन्त्र अलग–अलग तथा सामूहिक रूप से विभिन्न रूपों में परस्पर सम्बद्ध होते हैं। भौतिक तत्व (स्थान, स्थलरूप, जलीय भाग, जलवायु, मृदा, शैल तथा खनिज) मानव–निवास्य क्षेत्र की परिवर्तनशील विशेषताओं, उसके सुअवसरों तथा प्रतिबन्धक अवस्थितियों को निश्चित करते हैं। जैविक तत्व (पौधे, जन्तु, सूक्ष्म–जीव तथा मानव) जीवमण्डल की रचना करते हैं।[2]

पर्यावरण प्रकृति के जैव–अवैध तत्वों का समुच्चय है, जिसका बोध स्थान और काल के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। समूचे सौर परिवार में हमारी पृथ्वी एकमात्र ग्रह हैं, जिस पर संतुलित पर्यावरण पाया जाता है। पृथ्वी के स्थलमण्डल, जलमण्डल, जीवमण्डल और वायुमण्डल पर्यावरण के घटक हैं जो इसे जीवित सत्ता का श्रेय प्रदान करते हैं। इसका सृजन प्रकृति ने एक निश्चित उद्देश्य और विधान के आधार पर किया है। पर्यावरण के अजैव तत्व प्रकृति के आधारी तत्व हैं जिनके सहयोग से जैव तत्त्वों का विकास हुआ है। ये दोनों तत्व समूह पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं। पर्यावरण के भौतिक तत्वों का क्षेत्रीय रूप विविधता का प्रतीक है। फलतः जैव तत्व भी तदनुसार सर्वत्र एक समान नहीं पाये जाते हैं। पर्यावरण का परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है जो जीवधारियों के विकास, विनाश का कारण बनता है। प्रकृति इस विकास और विनाश के माध्यम से अपने साम्राज्य को अक्षुण्ण बनाये रखती हैं।

प्रकृतिरिति च ब्रहम्णः सकाशान्नानाविचित्रजगन्निर्माण–
सामर्थ्यबुद्धिरूपा ब्रहमाशक्तिरेव प्रकृतिः।।

अर्थात् प्रकृति उसे कहते हैं, जो ब्रम्ह, के सानिध्य से चित्र–विचित्र संसार को रचने की शक्ति वाली, ब्रम्हा (ऊर्जाधारक) की बुद्धिरूपा (ऊर्जा) शक्ति संपन्नता युक्त हो।[3] अस्तु, प्रकृति का परम उद्देश्य चर–अचर के लिये ऐसी परिस्थिति प्रदान करना है जिससे पृथ्वी की जीवन्तता बनी रहे। अपने इस महान् उद्देश्य के लिये प्रकृति ने अनेक नियमों और व्यवस्थाओं का सृजन किया है जिसे प्राकृतिक नियम कहा जाता है। इन्ही नियमों के तहत जीवन–चक्र संचालित होता है। जीवन–चक्र के संचालन में सौर–ऊर्जा और प्रकाश की अहम् भूमिका है। यही कारण है कि सूर्य को सृष्टि का नियमक कहा जाता है। सूर्य शक्ति विविध रूपों में जीवन का आधार है। जलवायु, मृदा, धरातलीय स्वरूप , वनस्पति और जीव प्रत्यक्ष रूप से इससे प्रभावित होते हैं। पृथ्वी तल और सौर ऊर्जा पर्यावरणीय विविधता के लिये सबसे अधिक उत्तरदायी हैं। इस प्रकार पर्यावरण के तीन प्रधान पक्ष हैं[4] :–

(क) भौतिक तत्व समूह
(ख) सौर ऊर्जा
(ग) जैव तत्व समूह

मनुष्य के सन्दर्भ में ''पर्यावरण'' का आशय मात्र ''प्राकृतिक पर्यावरण'' से ही सम्बन्धित नहीं है क्योंकि मानव जीवन एक जटिल प्रक्रिया हैं, जिसमें विभिन्न अनुक्रियाओं के द्वारा वह प्राकृतिक पर्यावरण के साथ सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक आदि पर्यावरण का भी पर्याय बनता है। समाज की विरचना में मानव की महत्वपूर्ण भूमिका होती है – इस प्रकार पर्यावरण का संरचनात्मक परिदृश्य प्रकट होता है।

भौतिक और सौर ऊर्जा तत्व पर्यावरणीय गुणवत्ता का सृजन जैव जगत् के लिये नैसर्गिक निवास्य का निर्माण करते हैं। इससे प्रकट होता है कि प्रकृति अपने विविध रूपी पर्यावरण के माध्यम से विविध प्रकार की जीवन प्रक्रिया संचालित करती है।[5] पर्यावरण मनुष्य के सम्पूर्ण आस्तित्व का निर्धारण मापदण्ड है, जिसका असंतुलन सृष्टि तत्वों के प्रति भी अस्तित्व विनाशकारी हो सकता है। पर्यावरण की संरचना में (1) भौतिक, (2) जैविक, (3) सांस्कृतिक तत्व महत्वपूर्ण हैं। भौतिक तत्वों से भौतिक पर्यावरण का सृजन होता है। (अ) स्थलमण्डलीय (ब) वायुमण्डलीय तथा (स) जलमण्डलीय पर्यावरण। जैविक तत्वों से पर्यावरण का निर्माण होता है। (1) वनस्पति पर्यावरण एवं (2) जन्तु पर्यावरण। सांस्कृतिक तत्व सांस्कृतिक पर्यावरण को जन्म देते हैं।

पारिस्थितिकी

प्राकृतिक पर्यावरण में जन्में और पलने वाले जीव पर्यावरण और परस्पर क्रिया द्वारा एक आवासीय व्यवस्था को जन्म देते हैं जिसे पारिस्थितिकी (Ecology) कहा जाता है। पर्यावरण की परिवर्तनशीलता के कारण पारिस्थितिकी भी परिवर्तित होती रहती है। जिसके कारण जीवो की अनुक्रियायें भी प्रभावित होती हैं।

पृथ्वी के जीव समूह को जीवमण्डल के नाम से जाना जाता है। जीव–मण्डल पृथ्वी की सतह तथा चतुर्दिक व्याप्त एक आवरण है जिसके अन्तर्गत चर–अचर तत्व एक निश्चित व्यवस्था के अन्तर्गत अपनी क्रियायें करते हैं। जीवन संचार जीव–मण्डल का परम लक्ष्य है जिसके फलस्वरूप वह अपना जीव–चक्र पूरा करते हैं। इस चक्र को पूरा करने के लिये जीवों और वनस्पतियों को आपस में तथा पर्यावरण से पारस्परिक क्रिया करनी पड़ती है। विश्व में अनेक जीवोम का विस्तार पाया जाता है। इन जीवोम में विविध प्रकार के जैव–अजैव तत्व अन्तर्प्रक्रिया करते हैं जिसकी एक विशिष्ट व्यवस्था होती है जिसे पारिस्थितिकी (Ecology) के नाम से जाना जाता है। अतः पारिस्थितिकी का निर्माण पर्यावरण का परम लक्ष्य है और पारिस्थितिकी पर्यावरण के कार्यविधि का परिचायक है।

पर्यावरण का संरचनात्मक वर्गीकरण

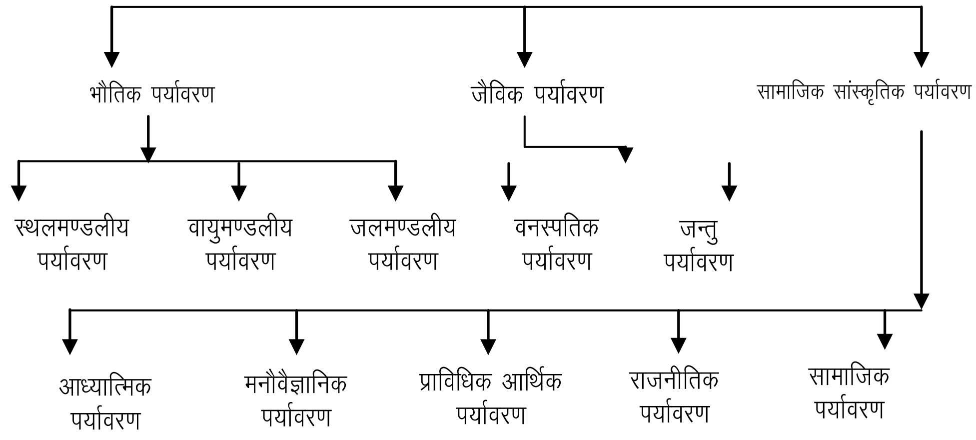

पारिस्थितिकी की अवधारणा जितनी नवीन है उतनी ही प्राचीन भी। वर्तमान वैज्ञानिक रूप आधुनिक विज्ञान की देन है किन्तु भारतीय मनीषियों ने इस अवधारणा का मूल्यांकन हजारों वर्ष पूर्व किया था। भारतीय मनीषियों ने, प्रकृति और जीव के अन्र्तसम्बन्धों को जन–जन तक बोध कराने के लिये विविध प्रतीकों के रूप में इन्हें धर्म, अध्यात्म, सामाजिक लियम और आचरण में समाहित कर दिया था। समुच्चय रूप में इसे 'विहंग योग'[7] कहा गया जो प्रकृति और जीव के अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या करता है। यही कारण है कि हजारों वर्ष तक यह सम्बन्ध मित्रवत् चलता रहा है। किन्तु आधुनिकता के आवेश में पुरानी परम्पराऔर आचरण को नकार दिया गया, प्रकृति पर विजय की अभिलाषा में भौतिक सुख जीवन का आधार बन गया। इससे प्रकृति और जीव के सम्बन्ध बिगड़ने लगे व बाध्य–स्वरूप विचारोपरान्त इस तथ्य की पृष्ठभूमि में आधुनिक विज्ञान ने पारिस्थितिकी की संकल्पना को जन्म दिया।[6]

संकल्पनात्मक पक्ष के अनुसार पारिस्थितिकी में जीवों तथा उनके पर्यावरण के अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। यह शब्द यूनानी भाषा के 'आईकोस' (OIKOS) शब्द से बना है जिसका अर्थ होता है निवास्य–स्थान। इस शब्दावली का प्रयोग उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में जीव–विज्ञान के उन पक्षों को समझने के लिये किया गया था जो वनस्पति व पर्यावरण तथा जीव व पर्यावरण के नैसर्गिक सम्बन्ध पर ध्यान केन्द्रित करना चाहते थे। पारिस्थितिकी की अवधारणा को आधुनिक सन्दर्भ देने का श्रेय जर्मन जीव–विज्ञानी अर्न्स्ट हैकेल

(1869) को है जिन्होंने ओइकोस के आधार पर ओइकोलॉजी (Oceologie) शब्द का प्रयोग किया। इसके पूर्व कुछ विद्वानों द्वारा पर्यावरण–जीव सम्बन्धों को विश्लेषित करने के लिये इथोलाजी (Ethology), हेस्कीकोलोजी (Hexicology) आदि नामावलियों का प्रयोग किया गया था। इन सभी नामावलियों की तुलना में हैकेल की शब्दावली अधिक प्रचलित हुई जो कालान्तर में अंग्रेजी उच्चारण में इकोलॉजी (Ecology) बन गयी।[7]

भौतिक तत्व आपसी अर्न्तप्रक्रिया से पर्यावरण को संतुलित रखते हैं, यह इनके शाश्वत सम्बन्ध का प्रतीक है। भौतिक तत्वों में पाँच प्रधान समूहों की अर्न्तप्रक्रिया से जैवीय परिस्थिति या पारिस्थितिकी (Ecology) का निर्माण होता है जो सृष्टि को जीवन्त बनाये रखती है। इन पाँच तत्व समूहों का अर्न्तसम्बन्ध परस्पर क्रिया पर आधारित है। इनमें किसका महत्व अधिक या कम है, इसका आकलन असम्भव है। वास्तव में से अलग–अलग होकर भी एक हैं। प्रकृति की समग्रता इसी से चरितार्थ होती है कि वर्तमान में इन तत्वों की स्वाभाविक व्यवस्था में मानवकृत व्यवधानों के कारण अव्यवस्था उत्पन्न हो रही है जिसके फलस्वरूप अनेक पर्यावरणीय संकट जीव–जगत् के अस्तित्व के लिये चिंतनीय हो गये हैं। पारिस्थितिकी के अवक्रमण का प्रतिफल–अस्वस्थता, विनाशकारी प्राकृतिक प्रकोप, व जीव–जगत–जीवन संकट रूप में परिलक्षित होने लगा है।''[8]

वर्तमान विनाशकारी, परिदृश्य

पर्यावरण प्रकृति का उपादान है, जिसकी व्यवस्था के लिए प्रकृति ने अनेक नियम और स्वतः कार्य संचालन प्रक्रिया बना रखी है। पर्यावरणीय तत्व आपसी अर्न्तप्रक्रिया से उसे संतुलित रखते हैं। किसी स्थान व क्षेत्र में इनका संयोग बदलता रहता है। अतः इसे बदलने स्वरूप के कारण पर्यावरण का वृहत प्रभाव जीवधारियों में भी परिवर्तन लाता है। यह परिवर्तन जब प्राकृतिक नियमों के अनुसार होता है तो जीवधारी अपनी व्यवस्था सुचारू रूप से कर लेते हैं, किन्तु जब यह परिवर्तन आकस्मिक या प्राकृतिक नियमों के विरूद्ध होता है तो जीवधारियों का अस्तित्व संकटग्रस्त हो जाता है। पश्चिमी देशों में औद्योगिक निष्पाद इतनी मात्रा में जल में मिल गये हैं कि उसके सेवन से मनुष्य, पशु व वनस्पतियां भी रोग ग्रसित होकर अकाल मृत्यु का शिकार बन रहे हैं। खनिज विदोहन करते समय मानव कदाचित ही सोचता है किवह प्रकृति का शोषण कर रहा है या वायुमण्डल में विषैली गैसों को उत्सर्जित कर वायुमण्डल का गुण विनष्ट कर रहा है जो जीवधारियों के लिये अस्तित्व संकट उत्पन्न कारक कृत्य है।

प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता व लागरूकता भारतीय समाज में आदिकाल से रही है। भारतीय मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व प्राकृतिक व्यवस्था को आत्मसात कर धार्मिक व आध्यात्मिक पक्ष से जोड़कर जन–जन को जागरूक व सजग किया। प्राकृतिक तत्वों में मातृ–पितृ, वृक्षों को देवता, जीवों को ईश्वर का अंश, जल–वायु–ऋतु आदि को देवस्वरूप स्वीकार कर पूजनीय माना गया। इस प्रकार सामान्यतः मानव आचरण व व्यवहार को संयमित व संस्कारित कर प्रकृति के साथ साहचर्य व माधुर्य सम्बन्धों की स्थापना की गई। पीढ़ी–दर–पीढ़ी यह प्रक्रिया चलती रही, जिसके फलस्वरूप पर्यावरणीय समस्यायें न्यूनतम थी। अपने पाँच हजार वर्ष के सभ्यता काल में इस धारा को ऐसी कोई विकट समस्या नहीं सहनी पड़ी जो कुछ सौ वर्ष की तीव्र विकासकारी/विनाशकारी प्रगति के काल में प्रकट हो रही है। वर्तमान में भी निरक्षण ग्रामीण, शहरी नागरिक की तुलना में प्रकृति के प्रति अधिक संवेदनशील व माधुर्य भाव से पोषित है। आयुधों, नाभिकीय तापगृहों, कल–कारखानो, सिंचाई के साधनों, यातायात के मार्गों आदि के कारण भी पर्यावरण की अवमानना होती रही है, जिसके दुष्परिणाम मानव सभ्यता के साथ–साथ समस्त जीव–जन्तु व वानस्पतिक जगत के अवनयन व अस्तित्व संकट के रूप में दृष्टिगत होते हैं। पर्यावरण हास तब प्रारम्भ होता है जब जीवधारी विशेषकर मनुष्य उसकी उपेक्षा एवं अवमानना करने लगता है। इस क्रम तें पर्यावरण के प्रति किये गये अमैत्रीपूर्ण कार्य तथा प्रदूषण विस्तार, वन–विनाश, अधिक बढ़ता जनभार, संसाधनों का अनुचित दोहन आदि, ''स्वनियमन'', ''जन्म क्षमता'' से

अधिक हो जाता है। तो उसके फलस्वरूप पर्यावरण के तत्व पंगु होने लगते हैं। इसका सीधा प्रभाव पारिस्थितिकी पर पड़ता है। पारिस्थितिकी असंतुलन से जनित वनस्पति विनाश से जलवायु और मौसम का रूख बदल रहा है। भूमिक्षरण, सूखा, बाढ़ प्रकोप आदि पर्यावरण अवनयन के कारण वनस्पतियां एवं कई प्रजाति लुप्तप्राय हो रही है।[9]

जिस प्रकार शरीर में वात–पित–कफ की संतुलित अवस्था का नाम स्वस्थावस्था है तथा इनका संतुलन बिगड़ने का नाम ही रूग्णावस्था है, उसी प्रकार वायु, जल, भूमि आदि में संतुलन बने रहने से समस्त सृष्टि अपनी स्वस्थावस्था में रहती है। जब इन अवयवों का पारस्परिक संतुलन बिगड़ जाता है, तो इसमें रहने वाले प्रत्येक जीव–जन्तु, पेड़–पौधे तथा मानव पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगता है, जिससे उनकी शारीरिक, मानसिक प्रवृत्तियां अनिष्टकारी दिशा की ओर मुड़ने लगती हैं। प्रकृति अपनी सूक्ष्मतम रूप में सजीवता की मूर्ति दिखाई देती है। प्रकृति हमारे अन्तःकरण को न केवल ब्राम्ह रूप से अपितु आन्तरिक रूप से भी प्रभावित करती है।[10]

वैदिक काल में सृष्टि साम्यावस्था में तथा जीवनयापन की अनुकूलतम अवस्था में थी। उस समय आधुनिक काल की तरह पर्यावरण प्रदूषण की समस्या नहीं थी। फिर भी वैदिक संहिताओ में पर्यावरण के मूलभूत सिद्धांत स्थान–स्थान पर प्राप्त होते हैं। शान्तिपाठ के नाम से प्रसिद्ध यजुवेन्द्र के एक मन्त्र में सृष्टि के पदार्थों में सन्तुलन बनाये रखने का उपदेश किया गया है –

''ओहम् द्यौः शान्तिरन्तक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिर्विश्वदेवाः शान्तिर्ब्रम्ह शान्तिः सर्व शान्तिः
शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।[11]

अर्थात्, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, औषधि, वनस्पति, जल आदि शान्त भाव से सन्तुलित बने रहें।

यदि इन प्राकृतिक अवयवों में असंतुलित उत्पन्न होता है तो इनमें विकार उत्पन्न हो जायेगा जो पृथ्वी पर जीवन–संकट की स्थिति के रूप में परिलक्षित होगा, अतः समस्त प्राकृतिक तत्वों को संतुलित व साम्य स्वरूप में अवस्थित रहने की प्रार्थना की गई है। प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठानों व पूजा–पद्धतियों में गुजायमान इस मन्त्र द्वारा भारतीय मनीषियों ने जन–मानस को प्राकृतिक पदार्थों में शान्ति अर्थात् सन्तुलन बनाये रखने का उपदेश दिया है। वेद में पृथ्वी के पर्यावरण को परिष्कृत करने के साधन सावैलौकिक तथा सार्वभौम हैं। स्वतः नैसर्गिक प्रकुपित वायु, सूर्य, वर्षा तथाा विद्युत के कारण भी पृथ्वी के पर्यावरण में अन्तर आ जाता है, इन्हीं का शमन करने का उल्लेख यजुवेन्द्र के ''शान्तिकरण'' मन्त्रों में पाया जाता है।

''ओहम् शं नो वातः पवता शं नस्तपतु सूर्यः।
शं नः कनिक्रद्धदेवः पर्जन्योडअभिवर्षतु।।''[12]

अर्थात्, जहां शीतल सुखदायक मन्द–सुगन्ध वायु बहता है, सूर्य भूतल में रहने वाले प्राणी एवं पेड़–पौधों को अनुकूल प्रकाश प्रदान करता है, मेघ भी जल–वृष्टि के द्वारा वसुन्धरा को ''शस्यश्यामला' बना देता है, वहां भूमण्डल का वातावरण सुखद एवं मनोहर बन जाता है।

भारतीय दर्शन के वाङ्मय स्पष्टतः सृष्टि–चक्र के संतुलन व प्रकृति–माधुर्य के आधार पर प्राणी–जगत् में सुखदायक व आनन्दवर्धक जीवन की कल्पना उपदेशात्मक आदर्शात्मक, वैचारिक, चिंतनीय पद्धति प्रस्तुत करते हैं। आकाशीय आदित्य (सूर्य) तथा वायु के पवित्रतम प्रकाश और गुण से उत्पन्न हुये अन्न, फल–फूल आदि वस्तुओं के सेवन से प्राणी जगत् स्वतः स्वस्थ रहेगा। सूर्य आदि के प्रचण्ड ताप से रात–दिन भी प्रभावित होते हैं, क्योंकि सूर्य उदयास्त से ही रात–दिन का क्रम अनवरन् जारी है। अहोरात्र का निर्माता या कारण आदित्य है। अतः प्रचण्ड आदित्य का प्रभाव अहोरात्र पर होता ही है। इसलिये ग्रीष्म ऋतु में दिन एवं रातों के पर्याप्त गरम हो

जाने पर भूतल का पर्यावरण अत्यधिक गरम हो जाता है, जिससे प्राणी जगत् क्लान्त एवं खिन्न होकर भीषण गरमी की अनुभूति करता है। इसी दृष्टिकोण के आधार पर यजुवेन्द्र में कहा जाता है –

ओहम् अहानि शं भवन्तु नः शं रात्रीः प्रति धीयताम्।।[13]

वैदिक संसाधनों के माध्यम से दिवस तथा रात्रि के वातावरण में समन्वय एवं सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है। ऐसी अवस्था में 'अहोरात्र' प्राणीजगत् के लिये परम सुख व शान्ति का आधार बन सकता है। इस अवस्था में मानव जगत् दिन में अपने कर्तव्य–कर्मों का सम्पादन करने के उपरान्त रात्रिकाल में सुखद नींद का अनुभव करते हुये स्वयं को बलवान, बुद्धिमान, स्वस्थ एवं दीर्घायु बना सकेगा। ऐसी अवस्था में विश्व में उत्पन्न होने पर "शं न इन्द्राग्नी भवताभवोभिः शनं इन्द्रावरूणा रातहत्वा।"[14] इन्द्र, अग्नि आदि सभी दुःख निवारक तथा वरूण प्राणी जगत् के परमरक्षक सिद्ध होंगे। स्वच्छ पर्यावरण एक आदर्श जीवन की मूलभूत आवश्यकता होती है, जिसके असंतुलन से जलवायु में परिवर्तन की आशंका होती है और इससे धरती पर खाद्यान्न उत्पादन भी प्रभावित हो सकता है व मानव–जीवन से लेकर सकल चराचर जीव–जन्तु के समक्ष खाद्यान्न–संकट उत्पन्न होने की संभावना प्रबल हो सकती है। यही आशंका अब मूर्त रूप लेने की ओर अग्रसर है।

सन्दर्भ सूची–

1. डॉ. बी.के. श्रीवास्तव, डॉ. बी.के. राव, पर्यावरण पारिस्थितिकी, पृ. 1–6
2. साविन्द्र सिंह, पर्यावरण भूगोल, पृ. 21
3. सन्दर्भ निरालम्बोपनिषद्–6, पृ. 223
4. डॉ. बी.के. श्रीवास्तव, डॉ. बी.के. राव, पर्यावरण पारिस्थितिकी, पृ. 1–6
5. मंगला सिंह, पर्यावरण, अध्ययन, पृ. 5
6. डॉ. बी.के. श्रीवास्तव, डॉ. बी.के. राव, पर्यावरण पारिस्थितिकी, पृ. 1–6
7. साविन्द्र सिंह, पर्यावरण भूगोल, पृ. 50–52
8. पर्यावरण पारिस्थितिकी, पृ. 10
9. हरिश्चन्द्र व्यास, पर्यावरण शिक्षा, द्वितीय खण्ड, पृ. 61–68
10. Ecological Awareness By Niranjana Jena, p. 1-22
11. यजुर्वेद, 36–17
12. यजुर्वेद, 36–10
13. यजुर्वेद, 36–11
14. प्रो. ओम प्रसाद, पर्यावरण दर्शन, पृ. 1–3

●